Postal Regn. - RTK/010/2020-22
RNI - HRHIN/2003/10425

ओ३म्

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का पाक्षिक मुखपत्र

अगस्त 2021 (प्रथम)

Email : aryapsharyana@yahoo.in

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

Visit us : www.apsharyana.org

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,122
विक्रम संवत् 2078
दयानन्दाब्द 198

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
की
मुख-पत्रिका

वर्ष 17 अंक 13

सम्पादक :
उमेद सिंह शर्मा

पत्रिका-शुल्क
देश में
वार्षिक-200 रुपये आजीवन-2000 रुपये
विदेश में
वार्षिक शुल्क 100 डॉलर
आजीवन 400 डॉलर

पत्रिका का स्वामित्व
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि०)
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ,
गोहाना रोड, रोहतक-124001

सह-सम्पादक
आचार्य सोमदेव

सम्पादकीय विभाग
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक
सम्पर्क सूत्र-
चलभाष :-
मो० 89013 87993

॥ ओ३म् ॥

आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय चिन्तन एवं वैदिक जीवन मूल्यों की पाक्षिक पत्रिका

आर्य प्रतिनिधि

अगस्त, 2021 (प्रथम)
1 से 15 अगस्त, 2021 तक

इस अंक में....

1. सम्पादकीय—वेद-प्रवचन 2
2. जिज्ञासा-विमर्श (पाखण्ड) 4
3. विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी 5
4. आओ! धर्म को समझें 6
5. जब मांसाहारी के घर से स्वामी दयानन्द को मिला भोज निमन्त्रण 8
6. महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने निर्भीकता से तमाम धार्मिक-सामाजिक-राजनैतिक अंधविश्वासों का खण्डन करके सत्यज्ञान द्वारा समाज की विचारधारा ही बदल डाली 9
7. धर्मक्षेत्र में 11
8. परम दयालु, कृपालु और हमारा हितैषी परमेश्वर 12
9. समाचार-प्रभाग
10. शेष-भाग 16

आर्य प्रतिनिधि पाक्षिक पत्रिका के प्रसार में सहयोग दें

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक उलट-पलटकर रख देने लायक नहीं, बल्कि गंभीरतापूर्वक पढ़ने योग्य पत्रिका है। यदि आप इसके पाठक बनेंगे तो हमें विश्वास है कि पसन्द भी करेंगे और चाहेंगे कि इसे अन्य लोग भी पढ़ें। कृपया अपने जैसे गम्भीर पाठकों से 'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक पत्रिका की चर्चा करें, उन्हें इसका ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करके ऋषि ऋण से अनृण होवें।

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक का वार्षिक शुल्क 200/- रुपये एवं आजीवन शुल्क 2000/- रुपये है।

आप उपरोक्त राशि 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' दयानन्दमठ रोहतक के नाम से बैंक ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा भिजवाकर सदस्य बन सकते हैं।

—सम्पादक

सम्पादकीय...

वेद-प्रवचन

❑ संकलन—उमेद शर्मा, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्दमठ, रोहतक

गतांक से आगे....

रात का भी बहाना नहीं। अब मैं क्या करूँगा? ऐसे चिन्तित पुरुष की उषाएं भी 'अव्युष्टा:' ही हो जाती हैं।

'व्युष्टि:' का अर्थ है उषाकाल की प्रकाश की किरणें। 'व्युष्टि:' का उलटा है 'अव्युष्टि:', अर्थात् उषाकाल प्रकाश देने के स्थान में अंधेरा देने लगता है, अर्थात् ऋणी मनुष्य के दिन भी रात से अधिक अंधेरे होते हैं। ऋणी मनुष्य ऋण की चिन्ताओं के कारण दु:खी होकर वरुण देव से प्रार्थना करता है कि हे भगवन्! ऋण के कारण मेरा नाक में दम है। मैं सब प्रकार के सुखों से वंचित हूँ। कृपा करके ऋण के पाशों से मुझे मुक्त कर दीजिए और ऐसी शक्ति दीजिए कि मैं दूसरों की कमाई का उपयोग करने की इच्छा ही छोड़ दूँ और सब प्रकार के ऋणों से मुक्त हो जाऊँ।

ऋणी के लिए ऋणी होने की भावना पहली आवश्यक वस्तु है। जो ऋणी ऋणी होते होते हुए भी अपने को ऋणी नहीं समझता वह ऋण को भी चुकाने की भी कोशिश नहीं करता। ऋण को चुकाने की कोशिश भी वही करेगा जो ऋण को भार समझता है। बहुत से तो ऋण लेने से पहले ही ठान बैठते हैं कि हमको ऋण का उपयोग करना है, चुकाना नहीं। नास्तिक चार्वाक का कथन है—

यावज्जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुत:॥

जब तक जिओ सुख से जिओ। ऋण लेकर घी पिओ। जब मर जाओगे, तो देह भस्म हो जायेगी। तुम मरकर वापिस नहीं आओगे। जिसने तुमको कर्ज दिया है, वह किससे वसूल करेगा? यद्यपि दुनिया में लोग अपने को नास्तिक न कहते, न चार्वाक का अनुयायी मानते हैं, परन्तु व्यवहार रूप में इस श्लोक के ऊपर कार्य करने वाले सैकड़ों हैं। ऋण को लेने और न चुकाने के उपाय तालश करने में संसार लगा हुआ है। भिन्न-भिन्न प्रकार के कानूनों का सहारा लेकर ऋण से बचने का यत्न किया जाता है। कचहरियों में कितनी नालिशें होती हैं, जिनमें ऋण लेने वाले ऋण को स्वीकार ही नहीं करते या जानबूझकर दिवालिये बन जाते हैं। बहुत कम लोग ऐसे हैं जो राजा वरुण से सच्चे दिल से प्रार्थना करते हों कि परमात्म-देव उनको उनके चरणों से मुक्त कर दें। जिसने ऋण लेकर अपने को दबा हुआ अनुभव किया और इस चिन्ता के कारण उसकी सुखद उषाएँ अव्युष्ट अर्थात् चिन्ता के बादलों से आच्छादित हो गईं वह अवश्य ऋण से छूट जाएगा और वही अपनी कमाई का उपयोग कर सकेगा।

मनुष्य जिस परिस्थिति में जन्म लेता है उसमें यह असम्भव है कि वह किसी का ऋण न लेवे। सम्भव केवल इतना ही है कि जिनका ऋण ले उनका ऋण चुका दे। समस्त व्यापार ऋण के आश्रित है। समस्त सरकारें ऋण लेती हैं जिसको नेशनल डैट (National Debt) या राष्ट्रऋण कहते हैं। ऋण का संविधान यह प्रकट करता है कि आरम्भिक अवस्था में दूसरों की सहायता लेनी ही पड़ती है, चाहे आर्थिक हो, चाहे नैतिक, चाहे शारीरिक। परन्तु जब तक ऋण चुकाने की भावना बनी रहती है सामाजिक उन्नति में कोई बाधा नहीं पड़ती। कोई बैंक ऋण देने में संकोच नहीं करता यदि ऋण वसूल करने में कोई सन्देह न हो। छोटे व्यापारी ऋण लेकर ही व्यापार बढ़ाते हैं। परन्तु यदि ऋण को न चुकाने के प्रयत्न होने लगते हैं तो न बैंक चल सकता है न व्यापार। इसलिए ऋणी के मन में ऋणी होने की भावना जागृत होनी चाहिए।

शतपथब्राह्मण आदि ग्रन्थों में चार प्रकार के ऋणों का उल्लेख आता है—एक सामान्य है और तीन विशेष। विशेष तीन ऋण अधिक परिचित और प्रचलित हैं—एक-पितृऋण, दूसरा-देवऋण, तीसरा-ऋषिऋण।

पहला सामान्य ऋण तो हर मनुष्य पर है या यों कहना चाहिए कि हर प्राणी का हर प्राणी पर। हम अपनी हर एक सुविधा के लिए दूसरों के ऋणी रहते हैं। कभी-कभी तो हमको यह भी पता नहीं चलता कि अमुक भोग के लिए हम किसके ऋणी हैं।

आप सड़क पर प्रात:काल सैर के लिए जा रहे हैं। दूर से हवा में उड़ती हुई गुलाब की सुगन्धि आपके नाक में पड़ती है। आपको सुख का अनुभव होता है। यह गुलाब कहां है, किस बाग में है, किसने यह गुलाब लगाया है? यह सुगन्ध आपको दूसरों के परिश्रम से मिली है। आप उनके ऋणी हैं।

यदि आप इसको ऋण समझें तो आप भी ऐसे परोपकार के काम करें और संसार गुलाबों की सुगन्ध से भर जाए। परन्तु यदि आप समझें कि **'माले मुफ्त, दिल बेरहम'** तो संसार कण्टक बन जाए।

यहाँ एक छोटी-सी बच्चों की कहानी पर विचार कीजिए। एक पिता ने अपने बच्चे से कहा, ''कल हम तुमको शीरमाल खिलायेंगे।'' बच्चे ने पूछा, ''शीरमाल क्या होता है?'' पिता बोला, ''शीरमाल वह चीज है जिसके बनाने में हजारों आदमियों का हाथ लगता है।'' बच्चे को बड़ी उत्सुकता हुई। वह बडी उमंग के साथ प्रातःकाल की प्रतीक्षा करने लगा। जब प्रातःकाल हुआ और बच्चे ने ''शीरमाल-शीरमाल पुकारना आरम्भ किया तो पिता ने दो पैसे की जलेबियाँ हलवाई की दुकान से दिला दीं।'' लड़के ने कहा, ''यह तो शीरमाल नहीं है। शीरमाल के बनाने में तो हजारों मनुष्यों के हाथ लगते हैं। मैं तो हजारों क्या सौ मनुष्यों को भी नहीं देखता।'' पिता बोला, ''ये जलेबियाँ भी हजारों हाथों की बनी हुई हैं।'' बच्चों ने कहा, ''कैसे?''

पिता ने उत्तर दिया, ''देखो! जलेबी आटे की बनती है। आटा गेहूँ का बनता है। गेहूँ को किसान बोता है। सोचो तो सही कि खेत जोतने और गेहूं बोने से लगाकर आटा तैयार होने तक कितने आदमियों के हाथ लगे होंगे।''

लड़का दंग रह गया। वह हिसाब लगाने बैठा तो सैकड़ों की संख्या में प्रतीत हुई। बाप ने कहा, ''अभी तुमने पूरा नहीं सोचा। यह तो केवल गेहूँ का ही हिसाब लगाया है। घी के विषय में भी सोचो। फिर चीनी का नंबर आएगा, फिर यह भी देखना पड़ेगा कि भट्ठी में जो आग जलती है उसके लिए ईंधन उगाने और लकड़ी का कोयला प्राप्त करने के लिए कितने हाथ लगते हैं?'' लड़के ने देखा कि हाथों की संख्या जितनी विचार दौड़ाते हैं बढ़ती ही जाती है।

पिता ने कहा, ''इतना ही नहीं। अभी तक तो तुम्हारा ध्यान केवल गेहूँ, चीनी, घी या अग्नि तक ही सीमित था। जिस कड़ाही में जलेबियाँ बन रही हैं उसकी कहानी भी तो सुनो, वह क्या कह रही है। कड़ाही लोहे की बनी है। लोहा खदान में होता है। कभी लोहे के कारखाने में जाओ या कोयले की खदानों पर दृष्टि डालो।''

यह एक छोटी-सी कहानी है जो बताती है कि हमारे ऊपर दूसरे कितने मनुष्यों का ऋण है। हर एक जलेबी हमारे लिए शीरमाल है, जिसमें हजारों आदमियों के हाथ लग चुके हैं और हम सब उनके ऋणी हैं। यह ऋण तो तभी छूट सकता है जब हम भी देश या जाति के उद्योगों में भरसक यत्न करें और जैसे हमने दूसरों से ऋण लिया है उसी प्रकार हम भी दूसरों को उसका बदला चुका सकें। जिस देश या जाति में ऐसे व्यक्ति रहते हैं, जिनके जीवन का एक ही उद्देश्य है कि ''माहं राजन् अन्यकृतेन भोजम्'' हे ईश्वर! हम दूसरों की कमाई न खाएं, अपितु जो कुछ उपभोग हमको प्राप्त हैं उनमें हमारा भी पूर्ण भाग हो तो संसार के समस्त कष्ट मिट जाएँ।

यह संसार एक सहयोगी संस्था है, एक कारखाना है, जिसके सभी मनुष्य भागीदार हैं। कारखाने के हित के लिए प्रत्येक व्यक्ति अपना हिस्सा लगाता है। जब तक भागीदार सत्यता पर आरूढ़ रहकर कारखाने में अपना-अपना भाग लगाते हैं तब तक कोई किसी का ऋणी नहीं या सब सबके ऋणी हैं, ऋण लेते हैं और ऋण देते हैं। किसी को किसी की शिकायत नहीं है, परन्तु जब भागीदारों की नीयत खराब हो जाती है और स्वार्थ भागीदारों को अन्धा कर देता है तो कारखाने टूट जाते हैं, जातियाँ नष्ट-भ्रष्ट हो जाती हैं। संसार के हर देश में व्यापारिक और औद्योगिक कम्पनियाँ (संघ) चला करती हैं। जब तक भागीदार अपने-अपने भाग के अनुपात से ही भोग करते हैं, ऋण का जाल किसी को कष्टप्रद नहीं होता परन्तु जब भाग के अनुपात से भोग का अनुपात बढ़ जाता है तो वरुण देव अपने पाशों को शिथिल करने के स्थान में कड़ा कर देते हैं। ऋग्वेद के एक और मन्त्र में वरुण देव से प्रार्थना की गई है—

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय।

ऋग्वेद 1/24/15

''हे वरुणदेव! अब अपने बड़े, छोटे और बिचले पाशों अर्थात् बन्धनों को ढीला कर दीजिए। हम इन बंधनों की जकड़ से तंग आ रहे हैं।''

वरुण की पाशों की जकड़ को ढीला करने की एक ही विधि है। वह है ऋणों की प्रकृति को समझकर अपने जीवन का एक नियम निर्धारित करना कि ''माहं राजन्नन्यकृतेन भोजम्'' मेरा भोग मेरे भाग के अनुपात से बढ़ न जाए। ऐसा न हो कि मैं कम दाम देकर अधिक दामों का माल खरीदूँ या धोखा देकर माल के दाम न चुकाऊँ।

भोग और भाग का अनुपात इस मन्त्र का मूलमन्त्र है, इसको अच्छी तरह याद कर लेना चाहिए, इससे सबका कल्याण होगा।

जिज्ञासा-विमर्श (पाखण्ड)

❑ आचार्य सोमदेव, मलारना चौड़, सवाई माधोपुर (राजस्थान)

गतांक से आगे....

व्यवहारभानु में भी लिखा है—''जब कोई सभ्य मनुष्य विद्वानों की सभा में वा किसी के पास जाकर नम्रतापूर्वक नमस्ते आदि करके....।'' यहाँ महर्षि ने भी सर्वत्र नमस्ते को ही कहा, माना है।

नमस्ते करने का प्रकार—दोनों हाथ जोड़कर, हाथों को हृदय से (छाती के बीच) स्पर्श करते हुए, किञ्चित् नतमस्तक होकर ही 'नमस्ते' शब्द का उच्चारण करना चाहिए। मस्तिष्क ज्ञान का, हाथ शक्ति का और हृदय श्रद्धा व प्रेम का केन्द्र है। सो हृदय को स्पर्श करते हुए, हाथ जोड़ किञ्चित् नतमस्तक हो नमस्ते करने का अभिप्राय है—ज्ञानपूर्वक, श्रद्धा और प्रेमसहित, अपने सामर्थ्य से किसी का यथोचित् अभिवादन करना। अभिवादन के रूप में छोटे अपने बड़ों के प्रति श्रद्धा और आस्था व्यक्त करते हैं, बड़े छोटों के प्रति अपना स्नेह व आशीर्वाद प्रकट करते हैं और बराबर वाले एक-दूसरे के प्रति मैत्रीभाव के सहयोग की कामना करते हैं। इसी प्रकार पुत्र माता-पिता के सामने और शिष्य गुरु के सामने आदर-सत्कार की भावना से नमन करता है तो माता-पिता और गुरुजन स्नेह करने व आशीर्वाद देने के लिए झुकते हैं।

इसलिए अभिवादन करते समय 'नमस्ते' का बोलना ही उपयुक्त है। इसी को बोलें और अन्यों को सिखावें, बतावें, आर्षपरम्परा का वहन करें।

जिज्ञासा-8. आप जैसे विद्वानों से सुना है कि जीवन में व्यवहार कुशलता का बहुत महत्त्व है। इसके बिगड़ने से ही मनुष्य दुःख बढ़ा लेता है। व्यवहार के लिए अर्थात् व्यवहार सिखाने के लिए आजकल के आधुनिक लेखकों ने प्रकाश डाला है। अनेक लोग इनकी पुस्तकों को पढ़ते भी हैं और इस विषय में हमारे ऋषियों ने भी अपने ग्रन्थों में उपदेश किया है।

मेरी जिज्ञासा यह है कि व्यक्ति अधिक व्यवहार कुशल, धार्मिक, उत्साही, शान्त इन आधुनिक लेखकों की पुस्तकें पढ़कर हो सकता है या ऋषियों की? कृपया, यह भी बतायें कि ऋषियों ने व्यवहार कुशलता के लिएक्या-क्या लिखा है? —संदीप आर्य, आट्टा जिला पानीपत (हरयाणा)

समाधान-आपने ठीक सुना है, जीवन में सद्व्यवहार का बड़ा महत्त्व है। आज सामाजिक व्यवहार सिखाने वाले बहुत कम हैं। इन व्यवहार शिक्षकों में अधिकतर विदेशी और कुछ देशी हैं। ये दूसरों के जीवन को व्यवहार-कुशल व सुखी-उत्साही बनाने की गारण्टी लेते हैं। कुछ तो मंचों पर जाकर सभा-सेमिनार करके इस प्रकार की शिक्षा देते हैं। इनके सभा-सेमिनार में व्याख्यान देने की फीस ही 60-70 हजार रुपये होती है। इन व्यवहार शिक्षकों ने अपने-अपने नाम से अनेक पुस्तकें भी लिख रखी हैं।

इनकी पुस्तकों, व्याख्यानों से कितने लोग व्यवहार-कुशल, सुखी, उत्साही हुए, यह बात तो ये ही जानें। यहाँ हम तो यह कहना चाहते हैं कि जो लोग नेम एण्ड फेम के चक्कर में हो, हजारों रुपये की फीस के चक्कर में हो, जिसका विचार केवल लोक तक सीमित हो, वह स्वयं पूरी तरह व्यवहार-कुशल, सुखी, उत्साही और दूसरों को भी इस प्रकार का बना सके, ऐसा लगता नहीं। किन्तु हमारे सामने ऐसे भी व्यक्तित्व हैं, जिनको नेम एण्ड फेम की कोई चिन्ता नहीं, रुपये-पैसे से कोई लेना-देना नहीं (अर्थात् सांसारिक ऐषणाओं से रहित), जो प्राणिमात्र के प्रति दया का भाव रखते हैं, जिनका उद्देश्य केवल सांसारिक सुख नहीं होता, जिनकी दृष्टि लोक और परलोक दोनों पर होती है, वे लोग स्वयं व्यवहार-कुशल, सुखी, उत्साही हैं और जो उनके संपर्क में आते हैं, वे भी ऐसे बन जाते हैं। वे हैं हमारे समस्त ऋषि-महर्षि। आपने पूछा है कि किनकी शिक्षा से व्यवहार-कुशल बन सकता है-इन आधुनिकों से या ऋषियों से? तो हमारा मत है-ऋषियों से, किन्तु ये आधुनिक भी सर्वथा त्याज्य नहीं हैं।

आपने कहा—ऋषियों ने इस विषय में कहाँ क्या लिखा है? सो हमें उसको यहाँ कुछ विस्तार से लिखते हैं। हम छोटे-बड़ों से किस प्रकार वर्तें, बड़ों का छोटों के प्रति और छोटों का बड़ों के प्रति कैसे व्यवहार करें, पति-पत्नी का व्यवहार, माता-पिता, भाई-बन्धु आदि का व्यवहार क्या है, कैसे करना चाहिए। सभा में जाकर हम कैसा आचरण करें आदि-आदि बातें महर्षि मनु ने अपने धर्मग्रन्थ मनुस्मृति में बतायी हैं।

क्रमशः अगले अंक में...

विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी

❑ संकलन—कन्हैयालाल आर्य, उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, रोहतक

गतांक से आगे....

प्रश्न 28. लोक में कितने प्रकार के मद हैं ?

उत्तर-संसार में तीन प्रकार के मद (अभिमान) होते हैं—

(1) विद्या का मद (अभिमान)।

(2) धन का मद (अभिमान)।

(3) उच्च कुल अथवा सहायकों का मद (अभिमान)।

जो व्यक्ति इन्हीं तीनों विषयों में डूबे रहते हैं उनके लिए ये मद बुद्धि को नष्ट करने वाले होते हैं। परन्तु सज्जनों के लिए ये मद नहीं बल्कि मद का उल्टा-दम बन जाते हैं। किसी कवि ने कहा है—

विद्या विवादाय, धनं मदाय शक्तिः परेषां परिपीडनाय।
खलस्य साधोर्विपरीतमेतत, ज्ञानाय, दानाय च रक्षणाय॥

जो दुष्ट (खल) लोग होते हैं उनके पास थोड़ी भी विद्या आ जाये तो अभिमान में आ जाते हैं, धन आजाये तो टेढ़े-मेढ़े चलने लगते हैं, कोई शक्ति (पद, मान) मिल जाये तो दूसरों को दुःख देते हैं, परन्तु जो सज्जन होते हैं, उनको विद्या प्राप्त हो जाये तो वे ज्ञानवान् बनते हैं, धन की प्राप्ति हो जाये तो दान करना प्रारम्भ कर देते हैं और पद, मान (शक्ति) मिल जाये तो दूसरों की रक्षा करते हैं। अतः सज्जनों के लिए ये तीन मद दम=शान्ति वाले होते हैं।

यहां विदुर जी धृतराष्ट को कह रहे हैं कि आप तथा आपके पुत्र थोड़ा-सा धन और भृत्य आदि सहायक पाकर मदमस्त हो रहे हैं। इसका परिणाम यह है कि आपके पुत्रों की बुद्धि भ्रष्ट हो रही है, अतः यही राज्य के पतन का कारण बन सकता है।

प्रश्न 29. क्या सत्पुरुषों को अपने किसी कार्य की सिद्धि के लिए असत्पुरुषों को लगाना चाहिये अथवा नहीं ?

उत्तर-ज्ञानवान् पुरुषों की गति सज्जन होते हैं अर्थात् सज्जनों से ही उनका कल्याण होता है और सज्जनों से ही सज्जनों का भी कल्याण होता है और दुष्टों का कल्याण भी सज्जनों द्वारा ही होता है परन्तु सज्जनों का कल्याण दुष्टों से नहीं हो सकता।

लोक में देखा जाता है कि कभी किसी कार्य की सिद्धि के लिए सत्पुरुषों के द्वारा असत् पुरुषों को भी याद बुला लिया जाता है तो वे असत् पुरुष उस कार्य को कुछ भी न करके अर्थात् करने से पहले ही स्वयं असत् होते हुए भी अपने आपको सत्पुरुष मानने लग जाते हैं।

भाव यह है कि सत्पुरुषों को चाहिए कि जहाँ तक हो सके असत्पुरुष को अपने किसी कार्य में न लगावे अर्थात् दुष्टों से किसी कार्य के लिए प्रार्थना न करें। प्राणियों की गति अर्थात् सहारा सत्पुरुष ही होते हैं। असत्पुरुष सत्पुरुषों के कभी सहारा नहीं होते। भाव यह है कि सत्पुरुष प्राणिमात्र की सहायता करते हैं चाहे वह सत्पुरुष हो या असत्पुरुष परन्तु असत्पुरुष सत्पुरुषों का कभी भी सहारा नहीं बनते।

इस पद्य के माध्यम से महात्मा विदुर यह कह रहे हैं कि पाण्डव सत्पुरुष हैं, आवश्यकता पड़ने पर वे तो आपकी सहायता कर देंगे, आप के सहायक और उपकारक बन जायेंगे परन्तु तुम और तुम्हारे पुत्र उनके सहायक और उपकारक कभी नहीं बन पाओगे। अप्रत्यक्ष रूप से महात्मा विदुर पाण्डवों के गुणों की प्रशंसा कर रहे हैं।

प्रश्न 30. कौन-सा ऐसा गुण है जिससे संसार में सब कुछ जीता जाता है ?

उत्तर-(1) अच्छे वस्त्र पहनने वाले से सभा जीती जाती है अर्थात् सभा में अच्छी पोशाक पहनने वाला अपने प्रभाव से सभा को जीत लेता है।

(2) गाय रखने वालों से सब प्रकार की मिठाई की इच्छा जीत ली जाती है अर्थात् जिसके पास गाय होगी वह उसके घी दूध से सभी प्रकार की मिठाइयाँ बनाकर खा सकता है।

(3) जिसके पास सवारी (वाहन) है, उससे मार्ग जीता जाता है, अर्थात् उसे मार्ग में पैदल चलने का कष्ट नहीं उठाना पड़ता, परन्तु शीलवान् अच्छे स्वभाव वाले पुरुष से सब कुछ जीत लिया जाता है अर्थात् उसे सभी अच्छा मानते हैं अर्थात् शीलवान् पुरुष सबके मन को जीत लेता है, क्योंकि संसार में मनुष्य का शील ही प्रमुख है, जिसका शील नष्ट हो गया हो तो न उसके जीने का कोई प्रयोजन है, न उसे धन से कोई लाभ मिल सकता है और न ही बन्धु-बान्धव उसकी कोई सहायता कर सकते हैं अर्थात् शील रहित मनुष्य का जीवन व्यर्थ है।

क्रमशः....

आओ! धर्म को समझें

❑ भद्रसेन वेद-दर्शनाचार्य

महाभारत का एक श्लोक है—

श्रूयताम् धर्मसर्वस्वं, श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषाम् न समाचरेत्॥

यहाँ पहला चरण है—**श्रूयताम् धर्मसर्वस्वम्**=धर्म के पूरे रूप को सुनो। कल को कोई यह न कहे आपने मेरी

पूरी बात तो सुनी ही नहीं। दूसरा चरण है—**श्रुत्वा चौवावधार्यताम्**=सुनने के बाद फिर विचार करो, निश्चित होने वाली बात के विविध पक्षों पर विचार करो। इनमें से कौन पक्ष उचित, उपयोगी है। किस पक्ष का [में] जवाब-तालमेल है, किसमें तालमेल नहीं है? यहाँ यह कहा जा रहा है कि धर्म के पूर्ण रूप को सुनने के पश्चात् उसकी सच्चाई, तत्त्व का निर्णय, निश्चय करो। अतः सारांश को समझो। महाभारतकार वेदव्यास [आर-पार की रेखा को जानने वाले] अपने जीवन के अनुभव को सामने लाते हुए कहते हैं कि साधारण से साधारण जन [आम आदमी] की समझ में आने वाली धर्म की पहचान, सीधी बात है कि **'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्'** अर्थात् जो बात, वर्ताव, व्यवहार अपने आपको अच्छा न लगे, पसन्द न हो, अपने साथ जिसको नहीं चाहते, हमें पसन्द नहीं। वैसा वह-वह दूसरों के साथ भी न करें। प्रतिकूल शब्द जो पसन्द न हो, अच्छा न लगे, जो न चाहा जाए—इस अर्थ में आता है। प्रतिकूल का विपरीत अनुकूल है जो कि अभीष्ट अर्थ में प्रयुक्त होता है।

प्रतिकूल शब्द निषेध पक्ष को आगे रखता है। इस ढंग से बात अधिक स्पष्ट-सहज लगती है। फूल चाहे देखने में सुन्दर, सुगन्धिप्रद, अच्छे कोमल होते हैं। पुनरपि कांटे का चुभन चर्चा में आ जाती है। हाँ, यह एक कथन की शैली है। इस शैली की पुष्टि एक गीत की पंक्ति से सरलता से होती है। **'भला किसी का कर न सको, तो बुरा किसी का मत करना।'** हो सकता है भलाई में कुछ धन, समय का व्यय हो।

मनुस्मृति में यही चर्चा **'आत्मनस्तुष्टिः'** शब्दों से हां पक्ष से आई है। **'धर्मशास्त्रं वै स्मृतिः'** मनु आदि स्मृति ग्रन्थ धर्मशास्त्र कहलाते हैं। मनु में चर्चा है कि **'वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वयस्य च प्रियमात्मनः'** इन चारों को धर्मलक्षण कहा है। यहाँ लक्षण शब्द पहचान, कसौटी, जानने के साधन अर्थ में है। यही चर्चा एक अन्य श्लोक में भी है। हां, **'धृतिः क्षमादशकं धर्मलक्षणम्'** में भी लक्षण शब्द है, पर यहाँ लक्षण स्वरूप अर्थ में यह कहा है कि कौन बात धर्म है, इसका पता, परिचय, बोध, वेद, स्मृति, सदाचार आदि से होता है।

धर्म—धर्म शब्द 'धृ' धातु से सिद्ध होता है, जो धारण अर्थ में है। किसी को धारे, संभाले, टिकाए रखे। जैसे आपस का बोल-चाल समाज को जीवित रखता है, वह धर्म है।

1. अनेक भारतीय शास्त्रों में धर्म की स्पष्ट रूप से चर्चा आती है। इनमें से सबसे पहले वैशेषिक दर्शन को लेते हैं। जो कि प्राचीन भौतिक शास्त्र है और इसको प्रारम्भ करते हुए महर्षि कणाद लिखते हैं कि **'यथातो धर्मं व्याख्यास्मः'**=अब हम धर्म को स्पष्ट करके समझायेंगे। यहाँ पृथिवी आदि द्रव्यों और उनके गुणों, कर्मों का साधर्म्य-वैधर्म्य के साथ वर्णन है। साधर्म्य=एक जैसी बात, वैधर्म्य=विपरीत स्थिति। इस शास्त्र में धर्म शब्द **स्वभाव अर्थ** में है। जब हम यह कहते हैं—जल का धर्म, अग्नि का धर्म तो ऐसी स्थिति में धर्म शब्द उस-उस भौतिक पदार्थ के **स्वभाव** का ही संकेत करता है। ये धर्म सबके लिए एक जैसे होते हैं।

2. छः दर्शनों में एक मीमांसा है। जिसका प्रारम्भ **'अथातो धर्मजिज्ञासाः'** से है आगे कहा है **'चोदना लक्षणो अर्थो धर्मः'** वेद में आया जो भलाई का कार्य वह धर्म है और यज्ञों का यहाँ वर्णन है। यज्ञ एक धार्मिक कर्म है, जिसमें मन्त्रों का पाठ आदि और आहुति दी जाती है। अतः पूजा-पाठ, जप-तप, बाह्य चिह्न धारण यह सारा **धार्मिक कर्मकाण्ड भी धर्म** कहलाता है।

3. **'धर्म शास्त्रं वै स्मृतिः'** इन अठारह से भी अधिक ग्रन्थों में [ब्राह्मणों] वर्णों [भिन्न-भिन्न कारोबार] वालो के तथा आश्रम [अलग-अलग आयु] वालों के कर्म [=करने

वाली बातें बताई गई] हैं। यहाँ अनेक प्रकरणों के विविध वर्तावों, व्यवहारों को धर्म कहा गया है। जैसे कि अ-माता-पिता और गुरु के आदर-सत्कार को धर्म माना है। आ-परस्पर सत्य तथा प्रिय बोलना एक परखा हुआ प्रमाणित धर्म है। इ-पति-पत्नी का परस्पर सच्चा [सुच्चा] व्यवहार करना धर्म है। ई-किसी भी प्रकार के विवाद के हल-समस्या-समाधान, निर्णय को भी धर्म कहा है। उ-मनु ने जीवन को ऊँचा उठाने वाले, जीवन को जीवित रखने वाले, चलाने वाले और आपस में व्यवहारों, वर्तावों, कार्यों, बातों, गुणों, धृति-क्षमा, सत्य, अहिंसा आदि को सर्वश्रेष्ठ धर्म कहा है। योगदर्शन ने इन्हीं को यम-नियम नाम दिया है तथा इनको सभी के लिए अनिवार्य, आवश्यक कहा है। ऐसा ही मनु का भी वचन है। इस सारे का सारांश है कि व्यवस्था, भलाई, अच्छाई को ही धर्म कहते हैं।

धर्म के लिए आवश्यक, अनिवार्य शब्द का प्रयोग करने पर स्वाभाविक रूप से प्रश्न उभर सकता है कि धर्मनिरपेक्षता की क्या स्थिति होगी?

यहाँ ध्यान देने वाली पहली बात तो यह है कि **धर्म शब्द आज भी कई अर्थों में चलता है।** जैसे कि हिन्दूधर्म, मुस्लिम धर्म आदि। कोई भी इन सारे धर्मों को नहीं मान सकता है। कोई एक छांटने की छूट होनी चाहिए और यही धर्मनिरपेक्षता है। दूसरी बात है कि आज धर्म का पहला भाव है-धर्म के बाह्य चिह्नों, निशानियों को स्वीकार करना। इसमें छूट होनी चाहिए। यथाभिमत-योग का यह सूत्र भी यही कहता है कि पहले भी यह स्वतन्त्रता थी। यही धर्मनिरपेक्षता है। मैं पूजा-पाठ, तीर्थ-व्रत, धार्मिक निशानियां स्वयं छांटूं, इनमें जबरदस्ती, अनिवार्यता न हो।

उपसंहार-भारतीय शास्त्र चाहे जिस भी क्षेत्र या शाखा से सम्बद्ध हों। उनमें धर्म शब्द भरपूर प्रयुक्त हुआ है। अधिकतम शास्त्रों में उसका फल सुख ही स्वीकार किया गया है। अत: इसको अच्छाई, भलाई भी कहा जा सकता है। मनुस्मृति में अनेक प्रकरण, प्रसंग के व्यवहारों को धर्म कहा है। इन सभी अपेक्षित रूपों को आज की दृष्टि से एक शब्द से कहना हो, तो वह शब्द होगा—**व्यवस्था** मनुस्मृतिकार ने जिन प्रकरणों में धर्म शब्द का प्रयोग किया है। वे हैं—

1. परस्पर बोलने की व्यवस्था।
2. आपस के सम्बन्धों को निभाने की व्यवस्था।
3. विशेषत: पति-पत्नी के पारस्परिक वर्ताव की व्यवस्था।
4. भिन्न-भिन्न अवसरों पर उभरने वाली उलझनों को सुलझाने की व्यवस्था, निर्णय, न्याय।
5. वैयक्तिक जीवन और सामाजिक जीवन के जीने की व्यवस्था। इसको कहीं कर्त्तव्य [नियम] अधिकार [यम] शब्द से पुकारा है, तो मनु ने धृति-क्षमा [दशकं धर्मलक्षणम्] आदि नाम दिया है।
6. धार्मिक कर्मकाण्ड जैसे कि विशेष चिह्न/प्रतीक धारण, व्रत-जप-यज्ञ [पूजा-पाठ] आदि-आदि।

इस व्यवस्था को प्रक्रिया, प्रणाली, पद्धति से भी कर सकते हैं।

संपर्क-B-2, 92/7B, शालीमार नगर, जिला होशियारपुर (पंजाब) मो० 9464064398

शोक समाचार

प्रसिद्ध समाजसेवी एवं आर्यनेता श्री बलवीरसिंह चौहान एडवोकेट चंडीगढ़ का दिनांक 6 जुलाई 2021 को 92 वर्ष की आयु में निधन हो गया। चौहान साहब आजीवन आर्यसमाज को समर्पित रहे। वे आर्यसमाज सैक्टर-22 के प्रधान, मंत्री तथा संरक्षक के पद पर वर्षों तक प्रतिष्ठित रहे।

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के विवाद में वर्ष 1998 में पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट चंडीगढ़ द्वारा उन्हें रिसीवर नियुक्त किया गया और उनकी देखरेख में सभा का विधिवत् निर्वाचन हुआ। वे अत्यन्त सूझबूझ एवं अनुभव प्राप्त व्यक्तित्व के धनी थे। उनके निधन से आर्यसमाज का एक मजबूत स्तम्भ गिर गया है और इस अपूरणीय क्षति से आर्यसमाज को विशेष आघात पहुँचा है।

परमपिता परमात्मा उनके परिवार को इस दु:ख को सहन करने की शक्ति एवं धैर्य प्रदान करे। आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा उनके निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करती है। **—शेरसिंह, सभा कार्यालयाधीक्षक**

जब मांसाहारी के घर से स्वामी दयानन्द को मिला भोज निमंत्रण

❑ राहुल आर्य, गांव व डाक० नयाबांस (रोहतक) फोन नं० 8571050423

इस लेख के माध्यम से महर्षि दयानंद सरस्वती जी के उन प्रसंगों का विवरण दिया जा रहा है जिनको स्वयं महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने अपनी आत्मकथा में लिखा है।

इन कुछ एक प्रसंगों से युवावस्था में ही स्वामी दयानंद जी के विराट् व्यक्तित्व उनके उत्तम चरित्र और भविष्य में उनके द्वारा किए जाने वाले महान् कर्मों का सुस्पष्ट संकेत मिलता है।

जब स्वामी दयानंद सरस्वती जी की आयु 21 वर्ष पूर्ण हो चुकी थी तब उन्होंने घर छोड़ दिया और योग, सत्य विद्या और ईश्वर को पाने की उनकी उत्कण्ठा उन्हें स्थान दर स्थान खोज के लिए विवश करने लगी। स्वामी जी घूमते-घूमते संवत् 1911 में कुंभ के मेले में पहुंच गए। जब मेला समाप्त हो गया तो वह ऋषिकेश फिर वहां से टिहरी आ गए। वहां बहुत से साधु और पंडितों से उनका मिलना हुआ।

एक दिन एक पंडित ने उन्हें अपने घर पर भोजन का निमंत्रण दिया। भोजन के लिए एक व्यक्ति बुलाने आया तो स्वामी जी एक ब्रह्मचारी के साथ पंडित के घर भोजन के लिए गए। जब स्वामी जी उनके घर के द्वार से अंदर घुसे तो देखा कि एक ब्राह्मण मांस को काट रहा था। उसको देखकर जब वह और भी भीतर गए तो बहुत से पंडितों को एक शामियाने के भीतर बैठे देखा। वहां पर बकरे का मांस, चमड़ा आदि देख वापस लौटने लगे। जब निमंत्रण देने वाले पंडित ने देखा तो बोला—आइए! मगर स्वामी जी ने उत्तर दिया कि आप अपना काम कीजिए हम जाते हैं।

यह कहकर स्वामी जी अपने स्थान पर लौट आए तब पीछे-पीछे वह पंडित स्वामी जी को वापस बुलाने आया पंडित को स्वामी जी ने कहा कि तुम मेरे लिए सूखा अन्न भेज दो। पंडित बोला-आपके लिए ही तो यह सब पदार्थ बनवाए हैं। स्वामी जी ने कहा आपके घर मुझसे भोजन नहीं होगा, क्योंकि आप लोग मांसाहारी हैं और मुझे माँस से घृणा होती है। तब पंडित ने स्वामी जी के लिए अन्न भिजवा दिया।

यह घटना स्वामी दयानंद सरस्वती जी के मात्र 21 वर्ष की आयु में उनके उत्तम देवत्व आचरण को सिद्ध करती है।

दूसरे प्रसंग में स्वामी दयानंद सरस्वती जी बर्फ के पहाड़ों में साधु-सन्यासियों की खोज करते-करते जंगल के कांटों से दो-दो हाथ कर बर्फ के पहाड़ों से घायल पाँव समेत गुप्तकाशी पहुंचे। वहां से थोड़ा ठहरकर वह ओखी मठ में आ ठहरे। वहां उन्होंने पाखंड, अंधविश्वास के बड़े-बड़े कारनामे देखे। वहां के महंत ने स्वामी जी की युवा अवस्था के व्यक्तित्व को देखकर कहा कि तुम हमारे चेले हो जाओ।

यहाँ हमारे पास रहो। ये लाखों के कारखाने तुम्हारे हो जाएंगे और मेरे पीछे तुम ही यहाँ के महंत होगे।

स्वामी जी ने कहा—सुनो अगर मेरी ऐसी ही इच्छा होती तो अपने माता-पिता मित्र, घर-परिवार को क्यों छोड़ता? क्या तुम्हारा और तुम्हारे मठ का स्थान उनसे भी अधिक है? मैंने जिसलिए घर-बार, मित्र, माता-पिता सब छोड़े हैं, वह तुम्हारे पास किंचित् मात्र भी नहीं है। तब महंत ने पूछा अच्छा बताओ क्या बात है? तुम क्या चाहते हो?

तब स्वामी जी ने उत्तर दिया कि मैं सत्य विद्या, योग, मुक्ति और अपनी आत्मा की पवित्रता जैसे गुणों से धर्मात्मापूर्वक उन्नति चाहता हूँ।

महंत ने स्वामी जी से वहाँ कुछ दिन ठहरने का आग्रह किया, किंतु स्वामी जी ने प्रात:काल उठकर अपने अगले गंतव्य की राह ली। यह घटना स्वामी जी के सत्य की खोज के सम्मुख भौतिक जगत् के सुख संपत्ति वैभव को तुच्छ प्रमाणित करती है, उनके सम्मुख सत्य विद्या, आत्मा की पवित्रता जैसे गुणों को ग्रहण करना ही प्रथम और अंतिम लक्ष्य था।

जंगल में भूख और प्यास से व्याकुल ऐसी परिस्थिति आने पर स्वामी दयानंद सरस्वती एक बर्फ का गोला खाकर अपनी क्षुधा और प्यास मिटाने का प्रयत्न करते हैं। किसी जीव की हत्या या मांसाहार का भाव उनके मन में इन कठिन से कठिन परिस्तिथियों में भी नहीं आता। लेख सीमा से लंबा ना हो और पत्रिका के मानक अनुरूप संक्षिप्त शब्दों में ही बड़ा संदेश दे—इसलिए समाप्त करता हूँ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने निर्भीकता से तमाम धार्मिक-सामाजिक-राजनैतिक अन्धविश्वासों का खण्डन करके सत्य ज्ञान द्वारा समाज की विचारधारा ही बदल डाली

❑ पण्डित उम्मेद सिंह विशारद, वैदिक प्रचारक

आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के जीवन चरित्र व शिक्षाओं को जिस किसी ने भी समझा और उनके ऋत ज्ञान को माना उस पर चिरस्थायी प्रभाव पड़ा। सहस्त्रों मनुष्यों के जीवन तो उन्होंने जीवनकाल में ही बदल डाले। उन्होंने आर्यसमाज के नियम में कहा सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करना चाहिए।

प्रत्येक मतों के विद्वान् पक्षपात छोड़ सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो-जो बातें सबके अनुकूल सब में सत्य है, उनका ग्रहण और जो एक दूसरे के विरुद्ध बातें हैं उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्ते-वर्त्तावे तो जगत का पूर्ण हित होवे, क्योंकि विद्वानों के विरोध से अविद्वानों में विरोध बढ़कर, अनेक विधि दु:ख की वृद्धि और सुख की हानि होती है।

सत्यमेव जयति नानृंत सत्येन पन्था वितो देवयान:-सर्वदा सत्य का विजय और असत्य का पराजय और सत्य से ही विद्वानों का मार्ग विस्तृत होता है। सब मतों में जो सत्य-सत्य बातें हैं वे-वे सब में अविरुद्ध होने से उनका स्वीकार करके और जो-जो मत मतान्तरों में मिथ्या बाते हैं उनका त्याग करना चाहिए। जिससें सबसे सबका विचार होकर परस्पर प्रेमी होकर एक मतस्य होवें, जिससे सबका कल्याण होगा। (स०प्र० भूमिका)

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी-ऋषि दयानन्द जी का जन्म (1824-1833 ई०) में भारत के कठियावाड प्रान्त के मोरेवी राज्य के टंकारा ग्राम में हुआ था। पिता का नाम कर्सन जी लाल जी त्रिवेदी था। वे औदीच्य ब्राह्मण थे। उनका बचपन का नाम मूलशंकर था। संन्यास लेने के बाद उनका नाम दयानन्द हुआ। उन्नीसवीं सदी में भारत की विषम परिस्थितियों के चेलेंज के रूप में ऐसे ही चार पांच महापुरुषों का जन्म हुआ। जिनमें से प्रमुख महापुरुष समाज-सुधारक और समाज में व्याप्त तमाम धार्मिक-सामाजिक-राजनैतिक अन्धविश्वासों व पाखण्डों को दूर करने वाले एक मात्र महर्षि दयानन्द सरस्वती जी थे।

ऋषि दयानन्द जी ने समाज में व्याप्त चुनौतियों को स्वीकार किया-उन्नीसवीं शताब्दी में ऋषि दयानन्द समय का दास बनकर नहीं आये, अपितु समय को अपना दास बनाने के लिए आये थे। जब ऋषि रणक्षेत्र में उतरे तो उनके सामने तमाम चुनौतियां थीं। प्रथम विदेशी राज्य-वेदों के रुढ़ि इतिहास परक मान्यतायें-धर्मों में तमाम अन्धविश्वास-अवतारवाद-मूर्तिपूजा-देवताओं के नाम पर पशुबलि-भूत-प्रेत जादू-टोना, फलित ज्योतिष-महन्तवाद-जाति-पाति-छुआछूत-विधवा प्रथा-सामन्तशाही शोषण-मन्दिरों में दासी प्रथा-मृतक के अन्तिम संस्कार में पाखण्ड-बहुदेवतावाद आदि-आदि।

रुढ़िवाद पर प्रहार-वर्तमान युग के भारत के सामाजिक विचारों में ऋषि दयानन्द प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने परम्परागत रुढ़ि प्रथाओं पर कठोर प्रहार किया। उन्होंने कहा यदि समाज को आगे बढ़ाना है तो तमाम रुढ़ि परम्पराओं को तोड़ना पड़ेगा। महर्षि जी ने प्रत्येक क्षेत्र में रुढ़िवाद का तिलांजलि देने का नारा लगाया। इसलिए ऋषि दयानन्द के समय में भारत के हर क्षेत्र में हलचल मच गई, पुराने आधार की जड़े हिल गयी और सदियों पुराने सामाजिक-धार्मिक-राजनैतिक मान्यताओं के संस्कार जो समाज में नासूर बन गये थे। समाज ने आश्चर्य से प्रत्येक मान्यताओं की मान्यता पर प्रश्नचिह्न लगाने शुरू कर दिया। एक प्रकार से वैचारिक सुधारवादी आन्दोलन प्रारम्भ हो गया। धर्म के ठेकेदारों की चूले हिलने लगीं।

धार्मिक क्षेत्र में रुढ़िवाद पर प्रहार-भारत का धर्म वेदों से बंधा हुआ था, हिन्दू धर्म वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानता था। किन्तु तत्कालीन स्वार्थी विद्वानों ने समाज में व्याप्त रुढ़ि मान्यताओं के आधार पर वेदमंत्रों के ऐतिहासिक रुढ़ि अर्थ कर दिये। जबकि वेदों में इतिहास नहीं है। वेदों की उत्पत्ति संसार का बनने पूर्व सृष्टि उत्पत्ति के समय से ही हो गयी थी। ऋषि ने सर्वप्रथम वेदो के प्रचलित अर्थों पर प्रहार किया और प्रचलित वेदों के रुढ़ि अर्थों को मानने से इन्कार कर दिया। वे संस्कृत के अगाध पण्डित थे। उन्होंने कहा एक ही शब्द के अनेक अर्थ होते हैं जैसे इन्द्र

शब्द का अर्थ ऐश्वर्यमान् है किन्तु परमेश्वर भी इन्द्र है, राजा भी इन्द्र है, धनीमानी भी इन्द्र है। ऋषि ने कहा वेदों में मूर्तिपूजा का एक मंत्र भी नहीं है, क्योंकि ईश्वर निराकार है सर्वव्यापक है। वह संसार को बनाता है हम उसे कैसे बना सकते हैं। वेदों में जड़ देवताओं का वर्णन है, चेतन देवता तो ईश्वर-आचार्य माता-पिता आदि है। वेदों में मनुष्य केवल एक जाति है और अन्य पशु-पक्षी अलग-अलग जातियां हैं। वेदों में भूत-प्रेत विद्या नहीं है, क्योंकि भूतों को मानना केवल कल्पना है। वेदों में भविष्य ज्योतिष नहीं है अपितु गणित ज्योतिष है। वेदों में एक ईश्वर की पूजा का विधान है। वेदों में ग्रह पूजन का विधान नहीं है, क्योंकि ग्रह जड़ पदार्थ होते हैं, वह व्यक्तिगत व्यक्ति का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते हैं, क्योंकि ग्रह पृथ्वी से भी बड़े होते हैं वह एक अदना मनुष्य पर कैसे चिपट सकते हैं। वेदों में पशुबलि का विधान नहीं है। अत: वेद ईश्वरीय ज्ञान है, जैसे ईश्वर ने सृष्टि रचना नियमित वैज्ञानिक ढंग से रचना की है और जिन पदार्थों का निर्माण किया है, वह मानव व अन्य प्राणियों के हित में की है। वेद सृष्टि का संविधान है। इसलिए वेदों के अनर्थ अर्थ लगाने से ही संसार में तमाम प्रकार का धार्मिक अन्धविश्वास फैला हुआ है। आइए हम वेदों की ओर लौटें।

सामाजिक क्षेत्र में रुढ़िवाद पर प्रहार-ऋषि दयानन्द जी के विचार का दृष्टिकोण सर्वथा मौलिक दृष्टिकोण था। वे भूत, वर्तमान तथा भविष्य को पिछले और अगले को मिलाकर चलना चाहते थे। उनका मानना है कि समाजरूपी भवन की नींव साम्यवाद पर आधारित है। उन्होंने तमाम रुढ़ि प्रथाएं जो मानव का शोषण करते हैं उनको नकार दिया। उनका कहना था कि समाजरूपी भवन की नींव उसके सात्त्विक- प्रगतिशील-पुरुषार्थी विचारों और चलन पर उसका मूल है। उनके समय में समाज अनेक कुप्रथाओं में जकड़ा हुआ था। सम्पूर्ण समाज नवीनता से डरता था, पुराने रुढ़ि संस्कारों पर ही चलना चाहता था, जैसे स्त्रीशिक्षा का अभाव, व्यर्थ जातिवाद, छुआछूत, गरीबों का शोषण, सामन्तशाही शोषण, मृतक के लिए सहभोज, अनेक व्यर्थ कर्म-काण्ड, जीते जी माता-पिता की सेवा का अभाव, देवी-देवताओं को कल्पित मान्यताओं में पशुबलि करके कथित देवताओं को खुश करना और अनेक विवेकहीन कुप्रथाओं से समाज बंधा हुआ था। ऋषि दयानन्द तथा अन्य समाज सुधारकों में आधारभूत भेद यह है कि जहां दूसरों ने हिन्दू धर्म को समाप्त करने का प्रयत्न किया, वहां ऋषि दयानन्द जी ने हिन्दुओं को हिन्दू रहते हुए उन्हें नवीनता में रंग दिया। वे इस बात को समझते थे कि मनुष्य अपने भूत को नही छोड़ना चाहता, इसलिए उन्हीं मूल संस्कारों में सत्य, सुधारवादी विचारों से प्रभावित करके नवीनता में रंग दिया। यही कारण है कि 19वीं सदी में जितनी सफलता उन्हें मिली उतनी अन्य को नहीं मिली। आश्चर्य है उनके विचारों को लेकर 20वीं सदी के समाज के सुधार में सुधारकों ने ऋषि दयानन्द के आदर्शों को अपनी विचारधारा में विशेष स्थान दिया।

राजनैतिक क्षेत्र में रुढ़िवाद पर प्रहार-ऋषि दयानन्द सरस्वती जी की विचारधारा का आधार रुढ़िवाद का उन्मूलन करना था। राजनैतिक क्षेत्र में जिसका राज्य चला आ रहा है और जो उसने राज्य नियम बनाए हैं वही ठीक है यह सामान्तशाही रुढ़िवादी विचार चला आ रहा था। ऋषि धार्मिक व सामाजिक नेता होते हुए भी रुढ़ि विचार पर प्रहार किया। सत्यार्थप्रकाश में उन्होंने लिखा कि अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद-परस्पर विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावार्त में भी आर्यों का अखण्ड स्वतंत्र स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों से पदाक्रान्त हो रहा है। कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वही सर्वोपरि उत्तम होता है।

मेरी समझ से वर्तमान में समाज में तमाम चारित्रिक बुराइयों का मूल आज भी स्वार्थ, व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षी, अधार्मिक व विवेकहीन नेतृत्व राजनीति है। समाज में जातिवाद, स्वार्थवाद, वर्गवाद, अलगाववाद, पदवाद वर्तमान नेतृत्व राजनीति ही तो है। मेरी समझ अनुसार अब समय आ गया है कि राष्ट्र में अनेक राजनीति कॉलेजों की स्थापना होनी चाहिए और जो सात्विक राजनीति कॉलेजों से उत्तीर्ण हो उन्हीं को चुनाव लड़ने का टिकट दिया जाए। कॉलेजों में वैदिक धर्म, नैतिकता, उच्च चारित्रिकता व कुशल नेतृत्व के पाठ्यक्रम हो। इससे कालान्तर में हमारे राष्ट्र का नेतृत्व पवित्र चरित्रवान्, नि:स्वार्थ, परोपकारी वाले मनुष्यों के हाथों में हो सकता है।

सम्पर्क-गढ़ निवास मोहकमपुर, देहरादून (उत्तराखण्ड)
मो० 9411512019, 9557641800

धर्मक्षेत्र में

❑ प्राचार्य अभय आर्य, रोहतक

गणराज्य में मनुष्य समाज के अन्दर फूट डालकर ही शत्रु गणराज्य को कमजोर बनाते हैं। ऋषि दयानन्द ने सत्य वैदिक धर्म पर प्रकाश डालकर गणराज्य को सुदृढ़ करने

का प्रबल पुरुषार्थ किया। किसी ने ठीक ही कहा था कि वे दश वर्ष और जीवित रहते तो अपने देशवासियों के लिए सर्वाधिक सशक्त राष्ट्र का निर्माण कर जाते। लेकिन झूठे मक्कार लोग सदैव ही सत्य का विरोध करते हैं। सत्य के विरोध की इसी प्रवृत्ति के चलते उन्होंने ऋषि का विरोध किया। इस सत्य के अतिरिक्त ऋषि ने अपने पास अपना रखा ही क्या था? अत: उनका विरोध सत्य का विरोध है। इस विरोध करने वालों में आप अनेक लोग अब भी ऐसे देख सकते हैं जो वेद, गाय, ईश्वर में कोई श्रद्धा नहीं रखते। ये स्वयं ही सिद्ध करते हैं कि दयानन्द सत्य के उपासक थे, क्योंकि सत्य को दबाने की इनकी प्रवृत्ति ही इनको दयानन्द के विरोध के लिए प्रवृत्त करती है। ऋषि जी ने भी ऐसे लोगों का जो कठोर शब्दों में खण्डन किया तो वह असत्य, अविद्या के प्रति उनका मन्यु है। **'मन्युरसि मन्युं मयि धेहि'** का गुण उन्हें सच्ची उपासना से प्राप्त हुआ है। दादा बस्तीराम जैसे अनुपम प्रचारकों को भी यही गुण सच्ची श्रद्धा से प्राप्त हुआ।

पिछण गये लोगों बीज कसाइयों के—

कहते हैं कि बाहर वालों की अपेक्षा अपनों का विरोध अति कष्टदायक होता है। ऋषि ने पादरी, मुल्ला, सब पछाड़ मारे। लेकिन फिर अपनों ने ही उनके विरुद्ध तरह-तरह के षड्यंत्र रचे, अफवाहें उड़ाई, भ्रम फैलाये। ऋषि ने इनका पर्दाफाश किया। इनमें एक प्रकार के तो व लोग थे जो केवल टका कमाने के लिए ही राम, कृष्ण आदि का नाम ले रहे थे, सत्य ज्ञान में विकृति फैला रहे थे। ऐसे लोगों को ऋषि ने 'पोप' कहकर पुकारा। दूसरे प्रकार के वे लोग जो ईश्वर के अस्तित्व को न मानकर ईश्वरीय सत्य ज्ञान वेद से भी विरुद्ध रहकर अहिंसा आदि की अव्यावहारिक व्याख्या करते रहे। ऋषि ने 'धर्म' के लिए ऐसे लोगों को महाभयंकर बताया। तीसरे वे लोग जो 'आर्यों' में धर्मक्षेत्र में आई कुरीतियों को तो कोसते रहे लेकिन विदेशी मतों को सृष्टिनियमविरुद्ध अतार्किक बातों पर एक शब्द भी न बोल सके।

ऋषि ने ऐसे लोगों को स्वदेश के लिए उन्नतिपरक नहीं बताया। सत्य को दबाने में ये लोग अलग-अलग रूप धार कर सामने आते रहे, ऋषि इनका सामना करते रहे। इनके इसी रूप को ऋषि ने 'हजारों पोप के अवतार' की संज्ञा दी है। ऋषि के जिन अनुयायियों ने सत्य के इन विरोधियों का सामना किया, उनकी उच्च श्रेणी में दादा बस्तीराम का नाम सदैव आदर से लिया जाता रहेगा। ऋषि के पुरुषार्थ से व उनके अनुयायियों के त्याग, तप से 'पोप' दब गया था लेकिन मरा नहीं था। इसी को लक्षित करके दादा बस्तीराम जी कहते थे कि 'पोप मरा नहीं है, वह दड़ मार गया है।'

वर्तमान में तो 'पोप' का एक बड़ा ही भयंकर महाविनाशकारी रूप सामने आया है। यह 'पोप' वेद, ब्राह्मण, ऋषि दयानन्द को कोसता रहता है, मुगलों की प्रशंसा करता रहता है। वैसे तो अकबर को महान् बताने व आर्यों को बाहर से आया मानने जैसे विचार परोसने का इसका रूप पुराना है, किन्तु इसका वर्तमान स्वरूप इसीलिए भयावह है कि ये आर्यजाति के अन्दर घुसकर ही मार कर रहा है। यह हमारे समाज सुधारकों, क्रान्तिकारियों के विचारों की अपने ढंग से व्याख्या करके अपने विचारों का लबादा उढ़ाकर समाज में परोस रहा है। 'पोप' के विचारों की जो शृंखला आई यह उसकी कड़ी तो है ही साथ ही अंग्रेजों, कम्युनिस्टों, मुगलों ने वैदिक धर्म को नष्ट करने के वैचारिक रूप में जो बीज बोए, यह 'पोप' उन्हीं बीजों में से एक बीज है। ऐसे पोप को देखकर ही दादा बस्तीराम कह उठे थे—

पिछण गये लोगों बीज कसाइयों के।
जहाँ धर्म का कोई सिलसिला मिलकर लोग उठाते हैं।
वहाँ म्लेच्छों के म्लेच्छ मिलजुलकर विघ्न मचाते हैं॥
बिन दामों के गुलाम देखो यवन जमाइयों के।
पिछण गये लोगों बीज कसाइयों के॥

आर्यो! लगे रहो, डटे रहो। इन लोगों का उत्तर देने के लिए ऐसे अनेक अग्निबाण भी हमारे पूर्वजों ने हमारे लिए रख छोड़े हैं। धन्य-धन्य! दादा बस्तीराम जी! समाचार मिला है कि श्री सहदेव समर्पित जी, सम्पादक शान्तिधर्मी जीन्द व भजनोपदेशकों के विषय में बेजोड़ कार्य कर रहे

शेष पृष्ठ 16 पर....

परम दयालु, कृपालु और हमारा हितैषी परमेश्वर

❑ मनमोहन कुमार आर्य, 196 चुक्खूवाला-2, देहरादून-248001, मो० 9412985121

यदि हम विचार करें कि संसार में हमारे प्रति सर्वाधिक प्रेम, दया, सहानुभूति कौन रखता है, कौन हमारे प्रति सर्वाधिक

सम्वेदनशील, हमारे सुख में सुखी व दुःखी में दुःखी, हमारे प्रति दया, कृपा व हित की कामना करने वाला है, तो हम इसके उत्तर में अपने माता-पिता, आचार्य और परमेश्वर को सम्मिलित कर सकते हैं। इसमें कहीं कोई अपवाद भी हो सकता है। हम जब इस प्रश्न पर विचार करते हैं तो हमें मनुष्य वा मनुष्य शरीर में निवास कर रही जीवात्मा का सर्वाधिक हितैषी जो इसे प्रेम करने के साथ इस पर मित्र भाव रखकर असीम दया व कृपा करता है, वह सत्ता एकमात्र परमेश्वर ही है। अतः हमें उसके प्रति उसी के अनुरूप भावना के अनुसार प्रेम, मित्रता व कृतज्ञता का व्यवहार करना चाहिये। यदि ऐसा नहीं करेंगे, संसार में अधिकांश अज्ञान व अन्य कारणों से ऐसा ही करते हैं, तो हम कृतघ्न होंगे जिस कारण हमें जन्म-जन्मान्तरों में अपने इस मूर्खतापूर्ण आचरण व व्यवहार की भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। अतः हमें अपने इस जीवन में प्रतिदिन समय निकालकर इस प्रश्न पर अवश्य विचार करने के साथ इसका समाधान खोजना चाहिये।

पहला प्रश्न है कि ईश्वर हमारा परम हितैषी किस प्रकार से है? इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए हमें ईश्वर व आत्मा के स्वरूप को जानना होगा। ईश्वर का स्वरूप हम आर्यसमाज के पहले व दूसरे नियम को पढ़ व समझकर जान सकते हैं। पहला नियम है कि **'सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।'** दूसरा नियम है कि **'ईश्वर सच्चिदानन्द-स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।'** पहले नियम में समस्त विद्या व समस्त सांसारिक पदार्थों, सूर्य, चन्द्र, पृथिवी व पृथिवीस्थ सभी पदार्थों का आदि मूल परमेश्वर को कहा गया है। जहां तक विद्या का प्रश्न है, यह परमेश्वर में सदा सर्वदा अर्थात् अनादिकाल से विद्यमान है। इस विद्या का मनुष्यों के लिए जो उपयोगी भाग है उसे ईश्वर बीज रूप में चार वेदों के माध्यम से सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों द्वारा प्रदान करता है। वेदों के मन्त्रों में जो शब्द, अर्थ और सम्बन्ध हैं, उनका अर्थ व उदाहरणों सहित ज्ञान भी परमेश्वर उन ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को कराता है। अतः मनुष्यों को प्राप्त होने वाली समस्त विद्याओं का आदि मूल परमात्मा ही निश्चित होता है जिसका आधार वेद है। मनुष्य समय-समय पर अपने ऊहापोह व चिन्तन मनन आदि कार्यों से उसका विस्तार कर उससे लाभ लेने के लिए नाना प्रकार के सुख-सुविधाओं के साधन आदि बनाते रहते हैं। हमें लगता है कि मनुष्य तो केवल अध्ययन, चिन्तन-मनन व पुरुषार्थ करते हैं परन्तु उनके मस्तिष्क में जो नये विचार व प्रेरणायें होती हैं वह ईश्वर के द्वारा उनके पुरुषार्थ आदि के कारण होती हैं। इसी प्रकार से ज्ञान-विज्ञान का विस्तार होकर आज की स्थिति आई है। आर्यसमाज के दूसरे नियम में ईश्वर के इतर स्वरूप पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। यह सब बातें वेदों के आधार पर निश्चित की हुई हैं। वेदों में इनका यत्र-तत्र वर्णन पाया जाता है। इसमें हम यह भी जोड़ सकते हैं कि जीवात्मा को उसके जन्म-जन्मान्तरों के अवशिष्ट कर्मों का सुख-दुःख रूपी फल प्रदान करने के लिए ही ईश्वर इस सृष्टि को बनाकर उसमें मनुष्यों व अन्य प्राणियों को उत्पन्न करता है। मनुष्य व इतर प्राणी योनियां भी जीवात्मा के पूर्व जन्म के कर्मों के आधार पर ही उन्हें परमेश्वर से प्राप्त होती हैं। ईश्वर ने जीवात्माओं के लिए इस सृष्टि को बनाया, आदि सृष्टि में वेदों का ज्ञान देकर मनुष्यों को उनके कर्तव्य-अकर्तव्य वा धर्म-अधर्म से परिचित कराया और जीवात्मा को जन्म देकर उन्हें नाना व विविध प्रकार के सुखों से पूरित किया, इन व ऐसे अनेक उपकारी कार्य करने के लिए ईश्वर सभी जीवात्माओं व मनुष्यों का परम हितकारी व हितैषी सिद्ध होता है। जीवात्मा का स्वरूप भी वेदों में तर्कपूर्ण शब्दों में बताया गया है जो कि अनादि, अविनाशी, अनुत्पन्न, अमर,

नित्य, सूक्ष्म, अल्पज्ञ, एकदेशी, जन्म-मरण वा सुख-दु:ख रूपी कर्म-फल के बन्धनों में बन्धा हुआ है। असत्य व अधर्म का पूर्णत: त्याग कर जीवात्मा जन्म-मरण के बन्धनों से छूट कर मुक्ति को प्राप्त करता है।

मनुष्य का शरीर संसार के सभी प्राणियों के शरीरों में सर्वोत्तम है। इसकी रचना अद्भुत है। मनुष्य वा अन्य प्राणियों के शरीरों की रचना का कार्य ईश्वर के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं कर सकता। आइये, इस मानव शरीर का वर्णन भी ऋषि दयानन्द के शब्दों में देखे लेते हैं। सत्यार्थप्रकाश के अष्टम समुल्लास में ऋषि दयानन्द लिखते हैं कि '(प्रलय की अवधि समाप्त होने के बाद) जब सृष्टि का समय आता है तब परमात्मा (सत्त्व, रज व तम गुणों वाली कारण प्रकृति के) परमसूक्ष्म पदार्थों को इकट्ठा करता है। उसको प्रथम अवस्था में जो परमसूक्ष्म प्रकृतिरूप कारण से कुछ स्थूल होता है उसका नाम महत्तत्व और जो उससे कुछ स्थूल होता है उसका नाम अहंकार और अहंकार से भिन्न-भिन्न पांच सूक्ष्मभूत: श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, जिह्वा, घ्राण पांच ज्ञानेन्द्रियां, वाक्, हस्त, पाद, उपस्थ और गुदा, ये पांच कर्म-इन्द्रियां हैं और ग्यारहवां मन कुछ स्थूल उत्पन्न होता है और उन पंचतन्मात्राओं से अनेक स्थूलावस्थाओं को प्राप्त होते हुए क्रम से पांच स्थूलभूत जिनको हम लोग प्रत्यक्ष देखते हैं, उत्पन्न होते हैं। उनसे नाना प्रकार की ओषधियां, वृक्ष आदि, उनसे अन्न, अन्न से वीर्य और वीर्य से शरीर होता है। परन्तु आदि सृष्टि मैथुनी (स्त्री-पुरुष संसर्ग द्वारा) नहीं होती। क्योंकि जब स्त्री पुरुषों के शरीर परमात्मा बनाकर उनमें जीवों का संयोग कर देता है तदनन्तर मैथुनी सृष्टि चलती है।'

इसी क्रम में ऋषि दयानन्द आगे लिखते हैं कि 'देखो! (ईश्वर ने) शरीर में किस प्रकार की ज्ञानपूर्वक सृष्टि रची है कि जिस को विद्वान् लोग देखकर आश्चर्य मानते हैं। भीतर हाड़ों का जोड़, नाड़ियों का बन्धन, मांस का लेपन, चमड़ी का ढक्कन, प्लीहा, यकृत्, फेफड़ा, पंखा कला का स्थापन, रुधिरशोधन, प्रचालन, विद्युत् का स्थापन, जीव का संयोजन, शिरोरूप मूलरचन, लोम, नखादि का स्थापन, आंख की अतीव सूक्ष्म शिरा का तारवत् ग्रन्थन, इन्द्रियों के मार्गों का प्रकाशन, जीव के जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति अवस्था के भोगने के लिये स्थान विशेषों का निर्माण, सब धातु का विभागकरण, कला, कौशल, स्थापनादि अद्भुत सृष्टि को विना परमेश्वर के कौन कर सकता है?'

इस प्रकार ईश्वर ने मनुष्य का शरीर बनाकर हम पर जो उपकार किया है, उसका हम किसी प्रकार से भी प्रतिकार वा ऋण, दया, कृपा आदि से अनृण नहीं हो सकते। हम ईश्वर के इन सब उपकारों के लिए कृतज्ञ हैं और यही भाव जीवन भर बनाकर रखें तभी हम मनुष्य कहलाने के अधिकारी हो सकते हैं। कृतघ्न मनुष्य को मनुष्य नहीं कहा व माना जा सकता। इतना ही नहीं, वेदों व वैदिक साहित्य का अध्ययन कर हम अपनी इस मनुष्य योनि में संसार के यथार्थ स्वरूप को जान सकते हैं व अर्जित ज्ञान से ईश्वरोपासना, अग्निहोत्र यज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथि यज्ञ और बलिवैश्वदेव यज्ञ सहित परोपकार, सेवा, दान आदि कार्यों को करके जन्म-मरण के दु:खों से मुक्त हो सकते हैं।

इसके अतिरिक्त वैदिक जीवन का अवलम्बन कर हम मुक्ति को प्राप्त कर 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्षों तक बिना जन्म व मृत्यु के ईश्वर के सान्निध्य को प्राप्त कर उसके आनन्द का भोग कर सकते हैं। ऋषि दयानन्द ने अपने जीवन के उदाहरण से मनुष्यों को धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष की शिक्षा दी और इसके साथ सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थ लिखकर मोक्ष के सभी साधनों पर व्यापक रूप से प्रकाश डाला है। मोक्ष के साधनों को व्यवहार में लाना असम्भव नहीं तो कुछ असुविधाजनक तो है ही। इसी को धर्म व तप कहते हैं और यही हमारे भावी जन्म को सुधारने के साथ हमें मोक्ष की ओर अग्रसर करता है। मोक्ष में असीम सुख प्राप्त करना ही प्रत्येक जीवात्मा का लक्ष्य है। यह भी एक तथ्य है कि हम सभी जीवात्मायें अनेक बार मोक्ष में रहे हैं और इसके अतिरिक्त अनेक बार अधर्म के कार्य करके नाना व प्राय: सभी पाप योनियों में रहकर हमने अनेक दु:खों को भी भोगा है। हमें यह भी जानना है कि माता-पिता और आचार्य हमारे मित्रवत् हितकारी एवं कृपालु हैं, परन्तु इन्हें प्रदान कराने वाला भी वही एक ईश्वर है। यह लोग भी हमारी ही तरह ईश्वर के कृतज्ञ हैं। अत: हम इन सभी के भी ऋणी हैं परन्तु ईश्वर का ऋण सबसे अधिक है। हमें इन सबके ऋणों से अनृण होने के लिए प्रयास करने हैं।

शेष पृष्ठ 16 पर....

बाढ़ड़ा में आर्यसमाज मन्दिर के लिए भूमिदान देने वाले दानवीर भामाशाह श्री अमरसिंह जी प्रधान का संक्षिप्त परिचय

(तीन पीढ़ियां भूमिदान कर चुकी हैं)

बाढ़ड़ा (जिला-चरखी दादरी, हरयाणा) निवासी किसान संघर्ष समिति के पूर्व जिला अध्यक्ष श्री अमरसिंह जी संघर्ष की प्रतिमूर्ति और उदारमना व्यक्तित्व और विशाल हृदय के धनी हैं। आपकी तीन पीढ़ियां भूमिदान कर चुकी हैं। इनके पिताजी श्री हरलाल जी ने बाढ़ड़ा में बिजली घर बनाने के लिए भूमि दान में दी। उन्हीं के पदचिह्नों पर चलते हुए श्री अमरसिंह जी ने बाढ़ड़ा में आर्यसमाज मंदिर, हनुमान मंदिर और बाबा प्रीतमदास मंदिर बनाने के लिए लगभग एक एकड़ भूमिदान दी है। इनकी प्रेरणा से इनके भाई के पुत्र श्री सुरेश कुमार ने भी बाबा प्रीतमदास मंदिर के लिए दो कनाल भूमि दान में दी है। इस भौतिकवादी युग में खुले दिल से भूमिदान देकर इसे प्रभु कृपा कहने वाले धार्मिक भावना से ओतप्रोत, निराभिमानी महामना श्री अमरसिंह जी को कौन नमन नहीं करना चाहेगा ?

सामाजिक जीवन-आपने अपना जीवन अपने लिए कम तथा समाज के लिए अधिक जिया है। लैंड मॉर्गेज बैंक के चेयरमैन, को-ऑपरेटिव बैंक तथा विद्यालय शिक्षा समिति के अग्रणी सदस्य के रूप में समाज-सेवा प्रारंभ करके मढ़ियाली कांड में अपने भानजे वेदप्रकाश सुपुत्र श्री नेकीराम जी बारड़ा (महेंद्रगढ़) का बलिदान होने पर किसानों के हित के लिए हमेशा संघर्ष करने का संकल्प लिया। भारतीय किसान यूनियन के प्रधान घासीराम नैन की गिरफ्तारी के विरोध में आप 12 दिन तक अनशन पर रहे, जिस पर भारतीय किसान यूनियन ने 14 मार्च 2004 को आपको **'किसान पुत्र'** की उपाधि से सम्मानित किया। आप जिला भिवानी और महेंद्रगढ़ की संयुक्त किसान संघर्ष समिति के 3 वर्ष तक प्रधान रहे और अब भी किसानों के हित के लिए संघर्षरत हैं।

विशाल हृदय व्यक्तित्व आदर्श परिवार-आपका हृदय बहुत बड़ा है। गऊओं, अनाथों, असहायों को देखकर आपका हृदय पिंघल जाता है और आप तत्क्षण उसकी सहायता के लिए हाथ बढ़ाते हैं। आप जुई रोड पर पेट्रोल पंप के पास डेढ़ एकड़ भूमि की सारी उपज गोशालाओं में दान देते हैं। आपने खुडाना (महेंद्रगढ़) की गोशाला में 1,85,000/- की लागत से गऊओं के लिए एक सैड बनवाया। आप पहाड़ी गोशाला में हर साल संक्रान्ति पर्व पर 11000/- रु० का योगदान देते हैं और समय-समय पर नगद और अनाज के रूप में अनेक अन्य गोशालाओं में दिल खोलकर सहयोग करते हैं। आप अब तक अनेक संस्थाओं, मंदिरों व गोशालाओं में लाखों रुपए दान दे चुके हैं।

आर्यसमाज को भूमि दान देकर अपने नाम को सार्थक (अमर) करने वाले-बाढ़ड़ा में आर्यसमाज की गतिविधियों को संचालित करने में स्थान का अभाव अनेक वर्षों से खटक रहा था। कैप्टन यशपाल आर्य शास्त्री पंचगांव द्वारा स्थापित, धर्मपाल आर्य 'धीर' शास्त्री भाण्डवा व चांदसिंह आर्य आदि ऋषिभक्तों के द्वारा पोषित आर्यसमाज बाढ़ड़ा के माध्यम से व्यायाम प्रशिक्षण शिविर, आर्यवीर दल शाखा, वेद पारायण यज्ञ, नियमित योगाभ्यास कक्षा आदि जनहितकारी कार्यों में समर्पित भाव से रत कुलदीप आर्य की तपस्या व अन्यान्य आर्यवीरों की लगन से प्रभावित होकर तथा रामेश्वर आर्य शास्त्री लाड, शंकरलाल पूर्व सरपंच बाढ़ड़ा, जगदीशचंद्र आर्य की प्रेरणा से आपने दो कनाल भूमि आर्यसमाज मंदिर के लिए दान देकर स्वनामधन्य आर्यसमाज की लोकोपकारी गतिविधियों को विस्तार देने के लिए आवश्यक स्थान के अभाव को पूरा करते हुए विशेष परोपकार का काम करके उज्ज्वल यश को प्राप्त किया है। इसके लिए आर्यसमाज बाढ़ड़ा एवं क्षेत्रीय सकल आर्यजन मुक्तकंठ से आपकी भूरी भूरी प्रशंसा करते हैं और सदैव कृतज्ञ रहेंगे।

सभी ग्रामवासी एवं क्षेत्रवासी हृदय से आपके प्रति आभार प्रकट करते हुए आपको बहुत सम्मान देते हैं और आपको दानवीर की उपाधि से विभूषित करते हैं और परमात्मा से आपके उत्तम स्वास्थ्य तथा यशस्वी दीर्घायु की कामना करते हैं।

—कुलदीप आर्य मन्त्री आर्यसमाज बाढ़ड़ा,
जिला-चरखी दादरी (हरयाणा)

आचार्य श्री खेमचन्द जी के लिए गुरुपूर्णिमा

गुरु पूजन दिन आया है, हम सब के मन को भाया है॥
गुरु पूर्णिमा का पुनीत दिवस है, 'गुरु' वंदन अभिनन्दन तुम्हारा है।
तुम मात-पिता गुरु सबके हो, जैसे गंगा की निर्मल धारा है।
योग से रोग भगाने वाला, स्वास्थ्य की अलख जगाने वाला।
कोई भी नहीं है 'सानी' तुम्हारा, पूज्य गुरु है 'हरमन' प्यारा।
आर्यसमाज की है जो शान, हम सबका भी है अभिमान।
हँसते हुए योग सिखाने वाला, 'जीने की कला' बताने वाला।
जो योग ध्वजा का वाहक है, वह 'शीतलता' और 'पावक' है।
उन्हें शत-शत वन्दन हमारा है, जैसे गंगा की निर्मल धारा है।
साहस में तो वे 'हिमाला' है, मुश्किलों से पड़ता सदा पाला है।
आर्यसमाज की हैं शान, स्वीकारो, हम सब का प्रणाम॥

—कुलदीप शर्मा 'कुलदीप'

आर्य माता वीरवती देवी दिवंगत

प्रख्यात भजनोपदेशक स्वर्गीय पण्डित तुलसीराम आर्य पूर्व प्रधान वेदप्रचार मण्डल बदरपुर क्षेत्र नई दिल्ली की

धर्मपत्नी श्रीमती वीरवती देवी आर्या का गत दिनों 85 वर्ष की दीर्घायु में दिवंगत हो जाने पर दिनांक 1.7.2020 को शान्तियज्ञ व श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया गया। शान्तियज्ञ श्री मुकेश शास्त्री आर्ष गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ फरीदाबाद (हरयाणा) से सम्पन्न कराया।

शान्तियज्ञ के उपरान्त श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्री मुकेश शास्त्री गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ ने अपने प्रवचन में बताया कि मुर्दा जलाने से उठने वाली बदबू को दूर करने के लिए मृतक के वजन से दुगनी घृत-सामग्री का प्रयोग करने का विधान ऋषि-मुनियों ने बताया है, इसलिए हमें वैदिकरीति से देवयज्ञ करना-कराना चाहिए।

आर्य जगत् के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् पंडित नन्दलाल निर्भय बहीन (पलवल) ने कहा कि संसार में जो व्यक्ति जन्म लेता है उसकी मृत्यु अवश्य होती है और जिसकी मृत्यु होती है उसका जन्म भी अवश्य होता है। परमात्मा ने मनुष्य को संसार में भलाई के काम करने के लिए भेजा है इसलिए हम सबको शुभकर्म करने चाहिएं। श्री नेत्रपाल शास्त्री ने श्रीमती वीरवती देवी को आर्यमाता बताया तथा उपस्थित देवियों से भी सच्ची माता बनने की प्रार्थना की। श्री अशोक आर्य ने सबको वेद पर चलने के लिए प्रेरित किया। श्री वेदप्रकाश आर्य, श्री सत्यप्रकाश व अपनी माता वीरवती आर्या के पदचिह्नों पर चलने का वचन दिया। शान्तिपाठ व ब्रह्मभोज के पश्चात् समारोह का समापन हुआ।

सोनीपत में वेदप्रचार कार्यक्रम

दिनांक 23/7/2021 को वेदप्रचार मंडल सोनीपत की ओर से यज्ञ व वेद प्रचार का कार्यक्रम हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा श्री संजीत शास्त्री जी रहे। यज्ञोपरान्त भजनोपदेशक श्री संजीत शास्त्री, रोशनी व ज्योती (भजनोपदेशिका) के बड़े सुन्दर भजन हुए। इस अवसर प्रधान श्री प्रेमसिंह आर्य, धर्मपाल मलिक सतबीर धनखड़, वेदपाल शास्त्री, डॉ. नारायण सिंह आदि अनेक धर्मप्रेमी सज्जन उपस्थित रहे। कार्यक्रम सराहनीय रहा।

छोटा विज्ञापन बड़ा लाभ

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक समाचार पत्र में विज्ञापन देकर लाभ उठायें।

धर्मक्षेत्र में.... पृष्ठ 11 का शेष....

आर्ययुवा श्री अमित सिवाहा, जीन्द दादा बस्तीराम जी के दुर्लभ 'आत्मचरित' का प्रकाशन शीघ्र करवाने जा रहे हैं। महापुण्य का कार्य है। मैंने भी संकल्प लिया था कि एक पुस्तक पण्डित जी के विषय में अवश्य लिखूँगा। उससे पहले भले ही उन पर कुछ और नवीन पुस्तकें आ जाएँ, लेकिन मेरा संकल्प दृढ़ रहेगा। ईश्वर से प्रार्थना है कि वे मेरी मनोकामना पूरी करे।

सत्यार्थप्रकाश में कमी छांटने वाले-

जिस व्यक्ति का स्वयं का कुछ आधार नहीं यदि वह किसी आधार पर टिकी वस्तु को आधारहीन कहे तो हँसी का पात्र बनता है। 'सत्यार्थप्रकाश' के प्रथम संस्करण में ऋषि के मत के विरुद्ध जो कुछ थोड़ा बहुत मिलाया गया उसे फिर से कुछ लोगों द्वारा अपनी दुर्भावना का हथियार बनाने का कुप्रयास किया गया। हालांकि इनके जो बड़े 'पोप' पूर्व समय में ऐसे प्रश्न उठाते थे उनका उत्तर स्वामी श्रद्धानन्द जैसे श्रद्धालुओं ने बड़े विस्तार से दे दिया था। लेकिन इन पोपों को तो यही नहीं पता कि तुम्हारे पूर्वज निरुत्तर हो चुके थे? हम इस 'पोप' की एक हरकत इसे स्वयं बताते हैं कि इस 'पोप' को विदेशी मतों की 'कुर्बानी' प्रथा के नाम पर मूक प्राणियों की हत्या का सिलसिला याद नहीं आता। यह पोप उस विषय पर कुछ नहीं कहता? स्वदेशी या विदेशी, दउोनों ही मतों में पशुबलि की कुप्रथा का जोरदार खण्डन करने वाले ऋषि दयानन्द पर ऐसे आरोप लगाते हुए इनकी जीभ भी नहीं जलती? सच ही कहा है—**'पिछण गये बीज कसाइयों के।'**

परम दयालु, कृपालु... पृष्ठ 13 का शेष....

ईश्वर का सत्य स्वरूप वेद, वैदिक साहित्य व महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों में वर्णित है। इसे पढ़कर ईश्वर के यथार्थ स्वरूप और उसके गुण-कर्म-स्वभाव को विस्तार से जाना जा सकता है। इससे ईश्वर की जीवों पर दया, कृपा व हित की कामनाओं के प्रति कृतज्ञता का भाव प्रकट करके उसकी स्तुति, प्रार्थना उपासना आदि के द्वारा अपने मानव जीवन को उन्नत बनाने के साथ भावी जन्मों में सुखों की प्राप्ति के लिए धर्म व सुखदायक कर्मों की पूंजी संचित की जा सकती है जो जन्म जन्मान्तरों में हमें मोक्ष प्रदान करा सकती है। आइये! ईश्वर की दया, कृपा व हितकारी भावना के प्रति अपनी नित्यप्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए वेद एवं वैदिक ग्रन्थों के स्वाध्याय सहित ईश्वर की ऋषियों के विधान के अनुसार स्तुति, प्रार्थना व उपासना करने का संकल्प लेकर उसे अपने जीवन में चरितार्थ करें। इसी से हमारा मानव जीवन सफल हो सकता है। **'नान्यः पन्था विद्यते अयनाय'** जीवन की उन्नति का इससे अधिक उत्तम अन्य कोई मार्ग नहीं है।

ऋषि दयानन्द की योग-साधना

ब्रह्मचर्य का कठोर व्रत कर, वज्र शरीर बनाया था।
वन उपवन हिम शृंगों पर रहस्य योग का पाया था॥
मोह-माया और गृहस्थी में, नहीं मन ऋषि का लागा।
सच्चे शिव की खोज में, घर बार छोड़कर भागा।
ये पूर्वजन्म के संस्कार, सुख-वैभव सब त्यागा।
सत्य सनातन वैदिक धर्म को, तब ग्रहण था लागा।
दस वर्ष के अन्तिम अल्पकाल में, अन्धकार का किया सफाया था।
वन उपवन हिम शृंगों पर रहस्य योग का पाया था॥ 1॥
तड़प एक ही मन में थी, सच्ची शिक्षा योग की पाने की।
पर्वत घाटी वन छाने, नहीं परवाह की जीवन जाने की।
सन्त महात्मा जो भी मिले, की विनती योग सिखाने की।
घोर विपत्तियां झेली तन पर, नहीं परवाह की जमाने की।
करबद्ध विनती कर पूर्णानन्द स्वामी से, संन्यासी का पद पाया था।
वन उपवन हिम शृंगों पर रहस्य योग का पाया था॥ 2॥
दण्ड कमण्डल लेकर ऋषि ने, फिर आगे कदम बढ़ाया।
व्याकरण और वेदाध्ययन का, मन में संकल्प बनाया।
योगसाधना की मर्म पिपासा ले, चाणोद कर्णाली चला आया।
ज्वालानन्द, शिवानन्द गिरि सन्तों से, प्रसाद योग का पाया।
गूढ़ रहस्य यहां सीख योग के, निज जीवन सफल बनाया था।
वन उपवन हिम शृंगों पर रहस्य योग का पाया था॥ 3॥
योग विद्या को सीख ऋषि फिर आगे कदम बढ़ाते हैं।
चण्डी पर्वत पर जाकर पुनः योग क्रिया दोहराते हैं।
समस्त बारीकियां सीख योग की, पूर्ण योगी बन जाते हैं।
धारणा ध्यान और समाधि में, घण्टों रत हो जाते हैं।
योग विद्या से ऋषि ने भक्तों को, कई बार दृष्टान्त दिखाया था।
वन उपवन हिम शृंगों पर रहस्य योग का पाया था॥ 4॥

—देशराज आर्य, सेवानिवृत प्रधानाचार्य,
725, सै०-4, रेवाड़ी, मो० 9416337609

प्रेषक :
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
दयानन्द मठ, रोहतक
हरियाणा, 124001

श्री .....

पता .....

.....

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि.) के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक उमेद शर्मा ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स के लिए आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ रोहतक-124001 से प्रकाशित।

- सम्पादक उमेद शर्मा